P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 VOL-6 * ISSUE-6 * (Part-1) February- 2019
E: ISSN NO.: 2349-980X **Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika**

भारतीय संघ की गति"ाीलता : चुनौतियाँ एवं भविश्य

दिग्विजय नाथ पाण्डेय
एसोसिएट प्रोफेसर,
राजनीति विज्ञान विभाग,
एच.आर.पी.जी. कालेज,
खलीलाबाद, संतकबीर नगर

सारांश

हमारे संविधान निर्माताओं का लक्ष्य एक वि"िाष्ट संघीय व्यवस्था की स्थापना करना था। भारत में संघ का गठन उस लम्बी ऐतिहासिक प्रक्रियाओं का परिणाम है, जिसका आरम्भ अंग्रेजी शासन काल में हुआ था। मार्लेमिन्टो सुधार, साइमन कमोशन रिपोर्ट, नेहरू रिपोर्ट तथा भारत सरकार अधिनियम, 1935 संघीय प्रक्रिया के प्रारम्भिक चरण थे। संघात्मक व्यवस्था का मूल उद्दे"य यह है कि केन्द्र तथा राज्यों के बीच विधायिका तथा कार्यपालिका शक्तियों का विभाजनहो, जो किसी संसद द्वारा पारित विधि का प्रतिफल न होकर संविधान द्वारा उल्लिखित प्रावधानों का परिणाम है। यह संविधान इसी उद्दे"य की पूर्ति करता है। संघवाद का मुख्य गुण संविधान द्वारा केन्द्र और राज्यों के बीच विधायिका एवं कार्यपालिका के शक्तियों के वितरण में निहित होता है। संघवाद वह यंत्र है जिसके द्वारा की सारी शक्तियों का विभाजन दो प्रकार की सरकारों के मध्य हो जाता है। ये दो प्रकार की सरकारें– केन्द्रीय और राज्य सरकारों के रूप में होती है। प्रो0 डायसी के शब्दो में, ''संघात्मक राज्य एक ऐसी राजनीतिक रचना है, जिसमें राष्ट्रीय एकता और शक्ति तथा प्रदे"ाों के अधिकारों की रक्षा करते हुए दोनों में सामंजस्य स्थापित किया जाता है।

मुख्य शब्दः एकात्मक, संघात्मक, सौदेबाजी।

प्रस्तावना

वस्तुतः संघवाद का सिद्धान्त सीमित सरकार के सिद्धान्त से सम्बन्धित है। संघवाद राष्ट्रीय सार्वभौमिक और राज्यों के अधिकारों की पृथक माँगों में जिस साधन द्वारा समन्वय एवं एकता स्थापित करता है–वह है लिखित संविधान, जिसके द्वारा सार्वभौमिकता सम्बन्धी शक्तियों का विभाजन केन्द्रीय एवं राज्यों की सरकारों के मध्य किया जाता है।

यद्यपि भारतीय संविधान में 'संघ' शब्द का प्रयोग नहीं किया गया है, लेकिन यह एक संघ राज्य है। भारतीय संविधान में संसघात्मकता के प्रमुख लक्षण विद्यमान हैं– एक : लिखित संविधान एवं संविधान की सवोच्चता, दो : शक्तियों का विभाजन, तीन : स्वतंत्र, निष्पक्ष एक सर्वोच्च न्यायपालिका, चार : संसद के उच्च सदन का राज्यों का सदन होना और पाँच : सरकार का दोहरापन इत्यादि। लिखित संविधान की प्रथम शर्त है। प्रो0 डायसी के अनुसार–

''एक संघीय राज्य अपना अस्तित्व उस लेख पत्र से प्राप्त करता है, जिसके द्वारा उसकी स्थापना हुई है।'' संघीय राज्य में लिखित संविधान सर्वोच्च कानून होता है। संविधान के द्वारा सरकारों के संगठन और कार्यों का कानूनी और संवैधानिक आधार तथा संघ राज्यों के सम्बन्ध एवं क्षेत्राधिकार निर्धारित किये जात है। संयुक्त राज्य अमेरिका का संविधान संघ शासन का सर्वोत्तम उदाहरण प्रस्तुत करता है, भारत में संघीय व्यवस्था को अमेरिकी संविधान से लिया गया है।

अन्य संघों की भाँति भारतीय संविधान द्वारा भी संघ और राज्यों के बीच शक्तियों का विभाजन किया गया है। सविधान के इस अ"ा का निर्माण कनाडा के संघ की प्रेरणा पर आधारित है, परन्तु एक समवर्ती सूची और जोड़ दी गई, जो आस्ट्रेलिया के संविधान की देन है। संघ सूची में 97 विषय हैं, यह सूची तीन सूचियों में वि"ाल है–

इसके प्रमुख विषय इस प्रकार हैं– युद्ध, विदे"ाी मामले, प्रतिरक्षा, स"ास्त्र सेनायें, अणु"ाक्ति, राजनयिक प्रतिनिधित्व, डाकतार, बेतार, दूरभाष, संचार, मुद्रा, टंकण, विदे"ाी विनियम, विदे"ाी ऋण, भारत का रिजर्व बैंक, सीमा कर इत्यादि विषय जो संघ के लिए समान हित के थे तथा सम्पूर्ण दे"ा को एक सूत्रता प्रदान करन के लिए आव"यक है। इस सूची में विर्णित विषयों पर केवल संसद को कानून बनाने का अधिकार है।

मूल संविधान के अन्तर्गत राज्य सूची में कुल 66 विषय रखे गये थे, लेकिन 42वें सांवैधानिक स"ोधन अधिनियम, 1976 द्वारा राज्य सूची के चार विषयों (ि"ाक्षा, वन, जंगली जानवरों और पक्षियों की रक्षा तथा माप–तौल) राज्य सूची से हटाकर समवर्ती सूची में कर दिये गये। इसमें प्रमुख विषय हैं : पुलिस, न्याय, जेल, स्थानीय स्व"ाासन, सार्वजनिक स्वास्थ्य, कृषि, सिंचाई, मत्स्य पालन, सड़कें आदि। राज्य सूची में स्थित विषय पर कानून बनाने का अधिकार केवल राज्य विधान मंडल को ही होता है। समवर्ती सूची में वे विषय रखे गये हैं, जिनका महत्त्व राष्ट्रीय एवं स्थानीय दोनों स्तरों पर है। मूल संविधान में इस सूची में 47 विषय रखे गये थे, लेकिन 42वें संविधान स"ोधन द्वारा राज्य सूची के चार विषय समवर्ती सूची में शामिल कर दिये गये और एक नवीन विषय 'जनसंख्या नियंत्रण और परिवार नियोजन' समवर्ती सूची में जोड़ा गया। इसमें प्रमुख विषय इस प्रकार हैं– फौजदारी विधि और प्रक्रिया, निवारक निरोध, विवाह और विवाह विच्छेद, कारखाने, श्रमिकसंघ, औद्योगिक विवाद, सामाजिक सुरक्षा और सामाजिक बीमा, ि"ाक्षा, जनसंख्या नियंत्रण आदि।

समवर्ती सूची के ये विषय केन्द्र तथा राज्य दोनों के ही क्षेत्राधिकार के अन्तर्गत रखे गये है। इन विषयों पर यदि केन्द्र सरकार ने कोई व्यवस्थापन नहीं किया है तो राज्य के विधानमंडल कानून बना सकते हैं। किन्तु यदि संसद कभी भी कानून बना दे तो वह राज्य द्वारा पारित विधि को शून्य करने में सक्षम होगी, परन्तु अनुच्छेद 254 के अन्तर्गत इसका एक आवाद भी है कि यदि समवर्ती सूची पर राज्य के व्यवस्थापन को राष्ट्रपति की अनुमति प्राप्त हो चुकी है तो यह विधि संसद की विधि के बावजूद भी लागू हो सकेगी।

कनाडा की संघीय व्यवस्था के अनुरूप भारत में अवा"ोष्ट अधिकार केन्द्र सरकार को ही प्रदान किये गये हैं, संविधान के अनुच्छेद 249 के अनुसार यदि राज्य सभा 2/3 बहुमत से राज्य सूची के किसी भी विषय को राष्ट्रीय महत्त्व का घोषित कर दे तो उस विषय पर कानून बनाने का अधिकार संसद को प्राप्त हो जायेगा। इसी तरह अनुच्छेद 250 के अनुसार संकट काल में भी संसद राज्य सूची के किसी भी विषय पर कानून बना सकती है। इसी प्रकार अनुच्छेद 252 के अन्तर्गत दो या दो से अधिक राज्यों के निवेदन पर संसद राज्य सूची के किसी भी विषय पर कानून बना सकती है।

भारतीय संविधान के संरक्षक के रूप में कार्य करने के लिए एक स्वतंत्र सर्वोच्च न्यायालय की भी सीापना की गयी है। जिन्हें उन कानूनों को असंवैधानिक घोषित करने का अधिकार है, जो संविधान के प्रतिकूल है। भारतीय संसद का उच्च सदन राज्य सभा राज्यों का सदन है। यह राज्यों का प्रतिनिधित्व करती है। यद्यपि यह सत्य है कि यह प्रतिनिधित्व समानता के आधार पर न होकर जनसंख्या के आधार पर है।

विशयवस्तु

भारतीय संघ की प्रकृति एक अत्यधिक विवादास्पद विषय न केवल संविधान सभी में था, बल्कि अध्ययन के क्षेत्र में भी है। जाने माने विधि वेत्ता एवं संसदीय मामलों के वि"ोषज्ञ डॉ0 लक्ष्मी मल्ल सिंघवी का विचार है कि भारतीय संघवाद राष्ट्रीय लक्ष्य की खोज और क्षेत्रीय दावों के निर्वाह का एक सक्षम आधार प्रस्तुत करता है। आधुनिक भारतीय संघवाद अनुबंधात्मक नहीं, समर्पणात्मक है। इसका आधार राज्यों और केन्द्र को जोड़कर तैयार नहीं किया गया। इसका मूल उद्दे"य केन्द्र से राज्यों को सत्ता का अधिकार दिलाना था। केन्द्रीयकरण की अपनी स"ाक्त प्रवृत्तियों के परिणामस्वरूप, भारतीय संघवाद राजनीतिक सामंजस्य और आर्थिक विकास के दोहरे उद्दे"य की पूर्ति का साधन बना। उन्होंने कहा कि यह विवाद कि विद्वान, अमेरिकी उदाहरणों से उधार ली गयी संघवाद की शास्त्रीय अवधारणा और पारिभाषिक आचार निष्ठा पर आस्था रखते हैं। भारतीय संघ वाद का स्वरूप भिन्न है और वह केन्द्रीयकृत संघवाद का नया नमूना पे"ा करता है। जो खासकर तृतीय वि"व के नव स्वतंत्र राष्ट्रों के लिए प्रासंगिक है।

प्रख्यात भारतीय संविधान वि"ोषज्ञ ग्रेनविल आस्टिन का भी यही कहना है कि संविधान सभी ने तो वस्तुतः भारत की वि"ाष्ट आव"यकताओं के अनुरूप एक नये प्रकार के संघीय संविधान का निर्माण किया।

संविधान सभी के अनेक सदस्यों का यह मत था कि संविधान में संघात्मक सिद्धान्त की नृ"ांसता पूर्ण हत्या की गयी है। श्री पी0टी0 चाको का मत था कि जो संविधान, सभी ने निर्मित किया है वह शरीर से संघात्मक है, किन्तु आत्मा से एकात्मक है। सभी शक्तियाँ संसद को प्रदान कर दी गयी हैं। डॉ0 दे"ामुख का मत था कि ''जो संविधान बना है वह संघात्मक की अपेक्षा एकात्मक अधिक है।''

भारतीय संविधान निर्माता भारतीय इतिहास के इस तथ्य से परिचित थे कि भारत में जब–जब केन्द्रीय सत्ता दुर्बल हो गयी, तब–तब भारत की एकता भंग हो गयी और उसे पराधीन होना पड़ा। संविधान निर्माता भारत में इतिहास की पुनरावृत्ति नहीं चाहते थे। भारतीय संघ जिस समस्या से ग्रसित है वह है आर्थिक एवं राजनीतिक समस्यायें तथा पादे"ाकता की सम्पूर्ण भावनायें, जिनके समाधान के लिए केन्द्र सरकार के पास समुचित शक्तियाँ होना अपरिहार्य है।

भारतीय संविधान में एकात्मकता की प्रबल प्रवृत्ति दिखायी देती है–

Noted Constitutional Expert Prof. K.C. Wheare says, *"India is unitary state with subidiary federal principles rather than a federal state with subsidiary unitary principales."*

इकहरी नागरिकता, शक्तियों का बंटवारा केन्द्र के पक्ष में होना, संघ एवं राज्यों के लिए एक संविधान, एकीकृत न्याय व्यवस्था, संकट काल में एकात्मक शासन, राज्यों के राज्यपालों की नियुक्ति, आर्थिक दृष्टि से राज्यों की दुर्बल स्थिति, राज्य सभी में राज्यों को समान प्रतिनिधित्व का न मिलना, सुपरिवर्तन"ाील संविधान इत्यादि ऐसे तत्त्व हैं जो व्यवहार में केन्द्र सरकार को अत्यधिक शक्ति"ाली बना देते हैं।

प्रायः संघात्मक दे"ाों के संविधानों में दोहरी नागरिकता पायी जाती है है। अमेरिका में ऐसी ही है, किन्तु भारत में नागरिकता का सम्बन्ध संघ से है और

राज्यों की अपनी कोई नागरिकता नहीं है। प्रत्येक भारतीय को सम्पूर्ण भारतीय क्षेत्र में समान अधिकार प्राप्त है। यद्यपि यह संघात्मक सिद्धान्त के प्रतिकूल है, किन्तु भारत की एकता को बनाये रखते की दृष्टि से इसे आव"यक समझा गया। भारतीय संविधान में शक्तियों का बंटवारा इस प्रकार किया गया है कि केन्द्र को राज्यों की अपेक्षा अधिक शक्तियाँ दी गयी हैं। सूची में सर्वाधिक 97 विषय रखे गये हैं, जिस पर केन्द्रीय सरकार कानून बना सकती है। वि"ोष परिस्थितियों में उसे राज्य सूची एवं समवर्ती सूची के विषयों पर भी कानून बनाने का अधिकार हैं अवि"ोष्ट शक्तियाँ भी केन्द्र को प्राप्त हैं। संविधान सभी के सदस्य डॉ0 के0एम0 मु"ाी ने स्पष्ट कहा था कि– ''तथ्य यह है कि भारत के महान दिन वे थे जब दे"ा में शक्ति"ाली केन्द्रीय शक्ति थी और सबसे बुरे दिन वे थे जबकि केन्द्र को प्रान्त की शक्ति द्वारा कमजोर किया जा रहा था और इसकी अवज्ञा हो रही थी।'' संविधान निर्माता यह जानते थे कि आज वि"व में केन्द्रीयकृत सरकारों के निर्माण की प्रवृत्ति है। अतः भारत में भी संघ को शक्ति"ाली बनने से रोकना अनुचित होगा। एक आद"ार्ा संघ में राज्यों के संविधान संघ से पृथक होते हैं। भारत में ऐसा नहीं हैं। भारतीय संघ की इकाईयों को अमेरिका के राज्यों तथा स्विट्जरलैंड के कैंटेनों की भाँति पृथक संविधानों के निर्माण का अधिकार नहीं है। अमेरिका या आस्ट्रेलिया के संघ में इकाई राज्यों की सीमा में उसकी सहमति के बिना परिवर्तन नहीं किया जा सकता, किन्तु भारत के संविधान के अनुच्छेद 3 के अनुसार संसद को यह अधिकार है कि (क) वह किसी राज्य से उसका कोई प्रदे"ा पृथक करके (ख) या दो या अधिक राज्यों को मिलाकर कोई नया राज्य बना दें, (ग) राज्य की सीमाओं तथा उनके नाम बदल दे। इनके लिए यद्यपि राष्ट्रपति सम्बन्धित राज्य के विचार मालूम करते हैं, लेकिन इन विचारों को स्वीकार करना या न करना राष्ट्रपति की इच्छा पर निर्भर है।

हमारे संविधान में राष्ट्रपति को आपातकालीन उपबन्ध के अन्तर्गत अनुच्छेद 352, 356 एवं 360 द्वारा संकटकालीन घोषणायें करने का अधिकार है। अनुच्छेद 352 के अन्तर्गत राष्ट्रीय आपातकाल के समय संसद की राज्य सूची में वर्णित सभी विषयों पर कानून बनाने और राज्यों पर सभी प्रकार के प्र"ाासकीय नियंत्रण प्राप्त हो जाते हैं। अनुच्छेद 360 के अन्तर्गत राष्ट्रपति वित्तीय संकट की घोषणा कर सकता है और इसके अन्तर्गत सभी राज्यों के धन विधेयकों को अपनी मंजूरी के लिए मंगवा सकता है। अनुच्छेद 356 के अनुसार राज्यों में संवैधानिक तंत्र की विफलता पर राज्यपाल केन्द्र शासन के एजेन्ट के रूप में राज्य का शासन चलाता है और उस समय संसद उस राज्य के लिए कानून बनाने का अधिकार रखती है। इस प्रकार संकटकाल में राज्य स्वायत्तता प्राप्त इकाइयाँ न होकर एकात्मक राज्य के अंग हो जाते हैं। प्रो0 एम0वी0 पायली के शब्दों में, ''संकटकालकी घोषणा से संविधान का संघात्मक स्वरूप समाप्त हो जाता है और केन्द्रीय शासन सर्वोपरि हो जाता है।

भारतीय संघ के इकाई राज्यों के राज्यपालों की नियुक्ति राष्ट्रपति द्वारा की जाती है। राज्यपाल राष्ट्रपति के प्रसाद पर्यनत अपने पद पर रहते हैं। राज्यपाल केन्द्र के प्रतिनिधि के रूप में कार्य करते है। राज्यपाल द्वारा इस तरह से केन्द्र सरकार का राज्यों पर प्रत्येक स्थिति में पूर्ण नियंत्रण रहता है। राज्य पाल को नियुक्त किये जाने की यह विधि संघात्मक सिद्धान्तों के प्रतिकूल है। वह केन्द्र अथवा राज्य के प्रति निष्ठा में पारस्परिक विरोध की स्थिति में केन्द्र को ही प्रसन्न रखना चाहेगा, इससे राज्य के हितों का बलिदान ही क्यों न करना पड़े। संविधान द्वारा वित्तीय दृष्टि से राज्य केन्द्रीय सरकार पर निर्भर बना दिये गये हैं। केन्द्र सरकार द्वारा राज्यों को विभिन्न प्रकार के अनुदान दिये जाते हैं और इस आर्थिक सहायता के कारण केन्द्र राज्यों पर छाया रहता है। आर्थिक क्षेत्र में आत्म निर्भर न होने के कारण राज्यों की स्वायत्तता नाम मात्र की रह गयी है। अन्य संघों की भाँति संसद के उच्च सदन राज्य सभा में राज्यों को समान प्रतिनिधित्व नहीं दिया गया है। संघ तथा राज्यों के बीच अथवा दो या दो से अधिक राज्यों के बीच विवादों का निपटारा करने के लिए संघ की स्थिति महत्वपूर्ण हैं। केन्द्रीय सरकार के पास समन्वयकारी शक्तियाँ हैं। केन्द्रीय सरकार ही वित्त आयोग, अन्तर्राज्यिक तथा क्षेत्रीय परिषदों का गठन करती हैं तथा इसके माध्यम से केन्द्र राज्य सरकारों की भूमिका को नियंत्रित करता है। प्रत्येक क्षेत्रीय परिषद् के अध्यक्ष के रूप में राष्ट्रपति का एक केन्द्रीय मंत्रीय नियुक्त करता है। इसके अतिरिक्त प्रधानमंत्री का करि"माायी व्यक्तित्व, एक दलीय प्रभुत्व, योजना आयोग का गठन, राष्ट्रीय विकास परिषद् न भी केन्द्रीय सरकार की शक्तियों को बढ़ाने में महत्त्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह किया।

वि"लेशण

भारत के संसदीय इतिहास में 1950 से 1967 तक का समय 'केन्द्रीयकृत संघवाद' का युग कहा जा सकता है। सन् 1950 से 1964 तक की भारतीय राजनीति 'नेहरू युग' कहलाता है। इस युग मे केन्द्र तथा राज्यों के सम्बन्ध मधुर बने रहे और उनमें उग्र मतभेद उभरकर सामने नहीं आये। इस कारण व्यवहार में कुछ ऐसे राजनीतिक तथ्य उभरे, जिन्होंने भारत में केन्द्रीयकरण की प्रवृत्ति को पनपने में मदद दी। केन्द्र में नेहरू, पटेल जैसे नेता मौजूद थे। केन्द्र तथा राज्यों में कांग्रेस का एक छत्र शासन था, अतः मतभेदों को दल के संगठन के स्तर पर हल कर लिया जाता था। नेहरू के व्यक्तित्व तथा नेतृत्व शक्ति का कोई राज्य विरोध करने तथा कोई नेता मतभेद उत्पन्न करने का साहस नहीं कर पाता था। योजना आयोग तथा राष्ट्रीय विकास परिषद्, संघ तथा राज्यों के बीच तालमेल बनाये रखने हेतु ''सुपर कैबिनेट'' के रूप में कार्य कर रही थी। एकदल की प्रधानता के कारण इनके कार्यों को चुनौती नहीं दी जा सकती थी। इस काल में केन्द्रीयकरण की स"ाक्त प्रवृत्तियों के परिणामस्वरूप, भारतीय संघवाद राजनीतिक समन्वय और आर्थिक विकास के दोहरे उद्दे"यों की पूर्ति का साधन बना।

चतुर्थ आम चुनाव 1967 के प"चात् शक्ति का संतुलन राज्यों की ओर झुका। कांग्रेस का एक छत्र शासन समाप्त हुआ। केन्द्र में नेहरू जैसा व्यक्तित्व नहीं रहा और राष्ट्रीय विकास परिषद् में अनेक दलों के मुख्यमंत्री अपनी केन्द्र विरोधी आवाज बुलन्द करने लगे।

राज्यों में नेहरू के बाद मुख्यमंत्री शक्ति के केन्द्र बन गये और वे केन्द्र को प्रभावित करने लगे। 1969 में कांग्रेस दल के विभाजन के पश्चात् शासक दल अल्पमत में आ गया, जिससे केन्द्रीय नेतृत्व को राज्यों की मांग के आगे झुकना पड़ा।

1967 के चुनावों के पश्चात् संघ एवं राज्यों के पारस्परिक संवैधानिकसम्बन्धों के विषय में मतभेद काफी उग्र रूप में उत्पन्न हुये। अधिकतर राज्यों में गैर कांग्रेसी दलों की सरकारें बनी। ये सरकारें संघ सरकार के नियंत्रण में उस सीमा तक नहीं रहना चाहती थी, जिस सीमा तक कांग्रेस दल की प्रादेशिक सरकारें पहले रहती थीं। भाषा को लेकर संघर्ष उत्पन्न हुए। केन्द्रीय रिजर्व पुलिस बल को लेकर मतभेद पैदा हुए और राज्यपालों की नियुक्ति का प्रश्न भी विवाद का कारण बन गया। केन्द्र और राज्यों के बीच विवादा के उपरान्त भी आपसी सहयोग बना रहा और 'सहयोगी संघवाद' (Cooperative Federalism) के युग का सूत्रपात हुआ। सहयोगी संघवाद का प्रमुख लक्षण केन्द्र और राज्यों की सरकारों की एक दूसरे पर निर्भरता है। इस व्यवस्था में केन्द्रीय सरकार शक्तिशाली तो होती है, किन्तु राज्य सरकारें भी अपने क्षेत्र में कमजोर नहीं होती। चौथे आम चुनाव के पश्चात् प्रधानमंत्री श्रीमती इंदिरा गांधी को मद्रास के श्री अन्नादुराई, उड़ीसा के के.आर.एन. सिंह देव, उत्तर प्रदेश के चौधरी चरण सिंह तथा पंजाब के गुरूनाम सिंह जैसे गैर कांग्रेसी मुख्यमंत्रियों का विश्वास प्राप्त करने में सफलता मिली।

सन् 1971 के पंचम लोकसभा के निर्वाचन तथा 1972 के राज्य विधानसभाओं के निर्वाचनों तथा जनवरी 1980 के लोकसभा एवं बाद के विधान सभा चुनावों से दो तथ्य उभरे : प्रथम–भारतीय राजनीति में श्रीमती गांधी और संजय गांधी ही सर्वमान्य नेता हैं तथा द्वितीय कांग्रेस दल ही जनता का नेतृत्व कर सकती है। इससे शक्ति सन्तुलन केन्द्र की और झुक गया। जिस तीव्र गति से संविधान में संशोधन किये गये, उसे तो केन्द्र की ओर झुक गया। जिस तीव्र गति से संविधान मे संशोधन किये गये, उससे तो ऐसा प्रतीत होने लगा कि भारत एकात्मकता की ओर उन्मुख हो रहा है। जून 1975 से मार्च 1977 तक भारतीय शासन एकात्मक राज्य में परिवर्तन कर दिया गया। समूची शक्तियाँ केन्द्रीय सरकार के हाथों में आ गई थी। आपातकाल के दौरान मुख्यमंत्रियों का एक पैर अपने राज्य में रहता था तथा दूसरा नयी दिल्ली में। श्री एच.एन. बहुगुणा एवं श्रीमती नन्दिनी सत्पथी जैसे कांग्रेसी मुख्यमंत्रियों को केन्द्र के इशारे पर हटना पड़ा। जनवरी 1976 में तमिलनाडु और मार्च 1976 में गुजरात में राष्ट्रपति शासन था। जनवरी 1980 के लोकसभा चुनावों के पश्चात् कन्द्रीय सरकार ने नौ राज्यों की गैर कांग्रेसी विधान सभाओं को भंग कर दिया। ऐसा लगने लगा कि देश पुनः एक दल प्रधान व्यवस्था की ओर बढ़ा रहा है।

छः आम चुनाव 1977 के परिणामों से भारतीय राजनीति में आमूल चूल परिवर्तन आया। केन्द्र में गैर कांग्रेसी जनता पार्टी की सरकार स्थापित हुई और राज्यों में विविध दलों की सरकारों की सीापना हुई। उत्तर प्रदेश, बिहार, मध्यप्रदेश, उड़ीसा, राजस्थान, दिल्ली, हरियाणा व हिमांचल प्रदेश में जनता पार्टी सत्ता में आई। पंजाब में जनता व अकाली दल, पश्चिमी बंगाल में मार्क्सवादी दल, तमिलनाडु व पाण्डिचेरी में ए.आई.डी.एम.के., कश्मीर में नेशनल कान्फ्रेंस, केरल के साम्यवादी दल के नेतृत्व वाला मोर्चा, कर्नाटक और आन्ध्र प्रदेश में कांग्रेसी सरकारों पदासीन थीं। केन्द्र की जनता सरकार एक दुर्बल सरकार थी, क्योंकि यह विभिन्न घटकों से बनी एक गठबन्धन सरकार के समतुल्य थी। अतः राज्यों की सरकारों ने सौदेबाजी (Bargaining) का अनवरत प्रयत्न किया। यहाँ तक कि कतिपय गैर जनता राज्य सरकारों ने 'राज्य स्वायत्तता' का नारा बुलन्द किया।

संघात्मक राजनीतिक व्यवस्था में विद्यमान दल प्रणाली का सामर्थ्य, राष्ट्रीय और प्रादेशिक राजनीतिक की महत्ता, राजनीतिक दलों की शक्ति संरचना, राष्ट्रीय और प्रादेशिक दलों की तुलनात्मक शक्ति आदि तत्त्व संघ व्यवस्था के व्यावहारिक क्रियान्वयन को प्रभावित करते हैं। संघ व्यवस्था का व्यहार में कार्यान्वयन लिखित संविधान और बुनियादी लक्षणों पर उतना निर्भर नहीं करता जितना विद्यमान दल प्रणाली पर निर्भर करता है। जिस देश में केन्द्र और राज्य स्तर पर एक ही की सरकार निर्मित होती है वहाँ केन्द्र राज्य सम्बन्धों के संचालन हेतु संवैधानिक सूत्र विकसित हो जाते हैं और इससे उच्च श्रेणी की केन्द्रीकृत व्यवस्था का अभ्युदय होता है। जिस देश में प्रादेशिक दल शक्तिशाली हैं, वहाँ व्यवहार में विकेन्द्रीकृत संघ व्यवस्था का जन्म होता है। संघ व्यवस्था में प्रादेशिक दलों का उदय और उनकी बढ़ती हुई शक्ति 'राज्यों की स्वायत्तता' की अवधारणा को बल प्रदान करते है और प्रादेशिक माँगों के प्रति चतना जाग्रत करती है।

कांग्रेस मजबूत केन्द्र के पक्ष में है। कांग्रेस का मुख्य लक्ष्य पंचवर्षीय योजनाओं के आधार पर देश का सामाजिक एवं आर्थिक पुनर्निर्माण करना है। भारतीय साम्यवादी दल देश के संघीय संविधान में परिवर्तनों की माँग करता है, जिससे केन्द्रीय सरकार राज्य के मामलों में हस्तक्षेप न कर सके। दल राज्यों के मध्य पायी जाने वाली क्षेत्रीय विषमताओं को दूर किये जाने पर बल देता है। मार्क्सवादी साम्यवादी दल 'राज्य स्वायत्तता' का प्रबल समर्थक है। ई.एम.एस. नम्बदटीपाद ने अपनी पुस्तक इंडिया 'अण्डर कांग्रेस रूल (Indian Under Congress Rule) में लिखा है कि में लिखा है कि 'भारतीय संघ में सम्मिलित सभी राज्यों को अधिक से अधिक स्वायत्तता प्राप्त होनी चाहिए। 1978 में पश्चिमी बंगाल की मार्क्सवादी सरकार ने 'राज्यों को स्वायत्तता' देने की दृष्टि से एक विस्तृत मसविदा केन्द्रीय सरकार के सम्मुख प्रस्तुत किया। सरकारिया आयोग को प्रस्तुत अपने ज्ञापन में मार्क्सवादी साम्यवादी दल ने यह मत व्यक्त किया कि– ''राज्य स्वायत्तता के बिना भारत की एकता नहीं रहेगी, अवशिष्ट शक्तियाँ राज्यों के पास होनी चाहिए न कि केन्द्र के पास। राज्यपाल का पद समाप्त कर दिया जाये, यदि ऐसा करना सम्भव न हो तो यह पद ऐसे किसी व्यक्ति द्वारा भरा जाय, जिसे राज्य विधान मंडल का विश्वास प्राप्त हो। अकाली दल, राजनीतिक सत्ता के विकेन्द्रीकरण तथा राज्यों को अधिक स्वायत्तता दिये जाने का समर्थक

है। तेलगू दे"ाम् केन्द्र के अधिकार सीमित करने के पक्ष में रहा है। आन्ध्र प्रदे"ा के पूर्व मुख्यमंत्री एन.टी. रामाराव के अनुसार केन्द्र के पास मात्र रक्षा, विदे"ाी मामले, संचार तथा मुद्रा विभाग रहने चाहिए और शेष विभाग स्वतंत्र रूप से राज्यों के अधीन होना चाहिए। राज्यपाल का पद समाप्त होना चाहिए। 1977 में गठित जनता पार्टी के चुनाव घोषणा पत्र में आर्थिक एवं राजनीतिक सत्ता के विकेन्द्रीकरण पर बल दिया गया था। सरकारिया आयोग को प्रस्तुत अपने ज्ञापन में जनता पार्टी ने कहा कि राज्य की विधायी शक्तियों पर केन्द्र की अतिक्रण करने की प्रवृत्ति अंकु"ा लगाया जाना चाहिए। राज्यपाल की नियुक्ति सम्बन्धित राज्य सरकार की सहमति से की जानी चाहिए। अनुच्छेद 356 समाप्त किया जाना चाहिए या उसमें स"ोधन किया जाना चाहिए। भारतीय जनता पार्टी केन्द्र सरकार को शक्ति"ाली बनाने के पक्ष में है। सरकारिया आयोग को प्रस्तुत अपने नीतिगत वक्तव्य में पार्टी ने कहा कि– ऐसा कुछ भी नहीं किया जाना चाहिए जिससे दे"ा की एकता कमजोर हो। वित्त आयोग के रूपरूप में उचित रूप से परिवर्तन किया जाये। राज्यपाल की शक्तियों का दुरूपयोग करने से रोकने के लिए संविधान के संगत उपबन्धों में स"ोधन किया जाए। डी.एम.के. ने संविधान में स"ोधन की सलाह दी, ताकि भारत स्व"ासी भाषायी राज्यों का एक विकेन्द्रित संघ बना जाए, जिन्हें भारत से पृथक होने का अधिकार प्राप्त हो। केन्द्र राज्य सम्बन्धों के अध्ययन हेतु डी.एम.के. सरकार ने 'राजमन्नार' समिति की नियुक्ति की, जिसने सुझाव दिया कि– (1) एक अन्तर्राज्य परिषद् को स्थापना की जाए, जिसका अध्यक्ष प्रधानमंत्री हो तथा राज्यों के मुख्यमंत्री उसके सदस्य हों। राज्यों को प्रभावित करने वाले विधेयक इस परिषद् के पराम"र्ा के प"चात् संसद में रखा जायेगा। (2) योजना आयोग समाप्त कर दिया जाए। राज्यों में अपने आयोजन मंडल हों और ये निकाय उन्हें पराम"र्ा देने का कार्य करें। (3) वित्त आयोग स्थायी आधार पर स्थापित किया जाय तथा राज्यों के पक्ष में करों का पहले से अधिक वितरण हो, ताकि उन्हें केन्द्र पर कम से कम निर्भर रहना पड़े। (4) राज्यपाल की नियुक्ति के लिए निर्धारित प्रक्रिया अपनाई जाए और राष्ट्रपति किसी उच्चाधिकार प्राप्त निकाय के पराम"र्ा से राज्यपाल नियुक्त करें। इस सम्बन्ध में अन्ना डी.एम.के. विचार डी.एम.के. के समान ही हैं।

निश्कर्श

इस प्रकार भारत के राजनीतिक दलों को संघवाद के सन्दर्भ में उनके विचारों के आधार पर तीन वर्गों में रखा जा सकता है– प्रथम वर्ग में वे दल आते हैं, जो शक्ति"ाली केन्द्र पर आधारित संघवादी व्यवस्था को बनाये रखना चाहते हैं– कांग्रेस इस श्रेणी में है। द्वितीय वर्ग में वे दल आते हैं, जो वर्तमान संवैधानिक ढाँचे और केन्द्रीय सरकार की शक्ति"ाली स्थिति को बनाये रखना चाहते हैं। किन्तु उनका आरोप है कि शासक दल संवैधानिक प्रावधानों का प्रयोग दलीय हितों को पुष्टि करते हुए राज्यों पर अनुचित नियंत्रण स्थापित करने म कर रहा है। उनका विचार है कि राज्यों के हितों की रक्षा के लिए संवैधानिक प्रावधानों में परिवर्तन की आव"यकता तो नहीं है, लेकिन केन्द्र में सत्तारूढ़ दल की इन प्रवृत्तियों पर अंकु"ा जरूरी हैं। जनता पार्टी, भारतीय जनता पार्टी, संयुक्त मोर्चा आदि इसी श्रेणी में आते हैं। तृतीय वर्ग में वे दल आते हैं जो केन्द्र राज्य सम्बन्धों में क्रान्तिकारी परिवर्तन चाहते हैं। राज्यों को अधिक अधिकार दिये जाने का समर्थन करते हैं। ऐसे दलों में डी.एम.के., अन्ना डी. एम.के., अकाली दल, तेलगु दे"ाम्, भारतीय साम्यवादी दल और मार्क्सवादी दल पमुख हैं।

1989 एवं 2004 के निर्वाचनों से यह स्पष्ट होता है कि भारत में संघ व्यवस्था का 'सौदेबाजी वाला प्रतिमान' ही कार्यरत रहा है। वि"वनाथ प्रताप सिंह 1989, चन्द्र"ोखर 1990, पी.वी. नरसिम्हा राव 1991, एच.डी. देव गौड़ा 1996, श्री इन्द्र कुमार गुजराल 1997, अटल बिहारी बाजपेयी 1998 एवं 1999 तथा डॉ0 मनमोहन सिंह 2004 के नेतृत्व में बनने वाली सभी केन्द्रीय सरकारें अल्प मत की सरकारें थीं, जिन्हें सत्ता में बने रहने के लिए उन दलों का सहारा लेना पड़ा, जो राज्यों में शक्तियों के पुंज हैं। अनेक राज्यों में क्षेत्रीय दलों को सरकारें सत्तारूढ़ हैं, जिनके कन्धों पर केन्द्रीय सरकार टिकी हुई है और अनेक मसलों पर वे केन्द्र से सौदेबाजी करने से नहीं हिचकिचाती। कावेरी जल विवाद पर कभी कर्नाटक आँख दिखाता है तो कभी तमिलनाडू की सरकार बन्द आयोजित करती है। अलमाती बाँध के मामले पर आन्ध्र प्रदे"ा के तत्कालीन मुख्य मंत्री चन्द्रबाबू नायडू ने केन्द्र के साथ सौदेबाजी का रूख अपनाया, जिससे तत्कालीन प्रधानमंत्री एच.डी. देवगौड़ा की स्थिति कमजोर हुई। 1998 के लोकसभा चुनावों में किसी भी गठबंधन को स्पष्ट बहुमत प्राप्त नहीं हुआ और भाजपा नेता अटल बिहारी बाजपेयी द्वारा केन्द्र में सरकार बनाने के दावे को उस समय बड़ा धक्का लगा, जब अन्ना द्रमुख नेता जयललिता ने अपने समर्थन की कीमत वसूलने के लिए कतिपय शर्ते रखीं–जैसे कावेरी ट्राइब्यूनल के फेसले पर अमल, सभी नदियों का राष्ट्रीकरण, 69 प्रति"ात आरक्षण को संवैधानिक संरक्षण, राज्यों को आरक्षण का कोटा अपनी जरूरत के हिसाब से तय करने का अधिकार, महिलाओं के लिए 33 प्रति"ात आरक्षणऔर आठवीं अनुसूची की सभी भाषाओं को राजभाषा का दर्जा देना। बीजू जनता दल ने उड़ोसा को वि"ोष दर्जा प्राप्त राज्य घोषित करने की माग की तो जम्मू क"मीर के तत्कालीन मुख्यमंत्री फरुक अब्दुल्ला ने केन्द्र की ओर स्वायत्तता का पन्ना उछालने का दुस्साहस किया। ममता बनर्जी ने प"चमी बंगाल के लिए 'वि"ोष पैकेज' हासिल कर लिया तो चन्द्रबाबू नायडू ने अपने दल के लिए स्पीकर का पद प्राप्त कर लिया। मई 2004 के आम चनावों के बाद केन्द्र में बनाने की कीमत कांग्रेस को राज्यों में विभिन्न सहयोगी दलों को सत्ता की चाभी देकर चुकानी पड़ी है। केन्द्र में कांग्रेस को समर्थन देने के बदले सहयोगी दल कड़ी सौदेबाजी कर रहे हैं। बिहार में राष्ट्रीय जनता दल, महाराष्ट्र में उसे राष्ट्रवादो कांग्रेस पार्टी और आन्ध्र प्रदे"ा में तेलंगाना राष्ट्र समिति के लिए रियायतें देनी पड़ी हैं। आज केन्द्र में वामपंथी दल सत्ता की कुंजी बने हुए हैं। तेलंगाना मामले पर श्रम मंत्री चन्द्र"ोखर राव ने केन्द्रीय मंत्रिमण्डल से इस्तीफा दे दिया।

सत्तारूढ़ दल के संगठनात्मक ढाँचे पर भी संघवाद का क्रियान्वयन बहुत कुछ निर्भर करता है। किसी भी दल की संगठनात्मक संरचना सदैव एक सी नहीं रहती। राजनीति कारकों की गति"ाीलता के कारण संगठनात्मक संरचना में गत्यात्मकता रहती है। केन्द्रीय नेतृत्व के प्रभाव"ाली होने के कठोर संघीय ढाँचा विकसित होता है। जब केन्द्रीय नेतृत्व कमजोर होता है तो ढीला संघीय ढाँचा पनपता है।

कांग्रेस, जनता पार्टी एवं जनता दल के परिप्रेक्ष्य में इस ओर अधिक स्पष्ट किया जा सकता है। कांग्रेस का संगठन कठोर था और जनता पार्टी एवं जनता दल का सगठन ढीला था। कांग्रेस दल में हाई कमान बेताज का बाद"ााह था। कांग्रेस के महत्त्वपूर्ण निर्णय हाई कमान के द्वारा ही लिये गये तथा उनका क्रियान्वयन बड़ी तत्परता से हुआ। राज्यों के मुख्यमंत्रियों की नियुक्ति एवं उनका पद से हटना हाई कमान की इच्छा पर निर्भर था। जनता पार्टी का संगठन ढीला था। पार्टी का हाई कमान काग्रेस दल की भाँति शक्ति"ााली नहीं था। राज्यों में अलग–अलग घटकों की सरकारें थीं और केन्द्रीय नेतृत्व घटकों में विभाजित रहा। तत्कालीन हरियाणा एवं उत्तर प्रदे"ा के मुख्य मंत्रियों ने 'जनता संसदीय बोर्ड' पार्टी अध्यक्ष के निर्दे"ाों की उपेक्षा की। इस प्रकार जनता शासन काल में ढीली–ढाली संघ व्यवस्था (Loose Federation) का प्रतिमान पनपने लगा। 1996 लोकसभा चुनावों के बाद केन्द्र के 'संयुक्त मोर्चे 1999 में राष्ट्रीय जनतांत्रिक गठबंधन (NDA) तथा 2004 में संयुक्त प्रगति"ाील गठबंधन (UPA) जैसे गठबन्धनों के हाथों में सत्ता की बागडोर आने से अन्तोगत्त्वा ढ़ीली–ढ़ीली संघ व्यवस्था का प्रतिमान विकसित होने लगा है। 2014 में लोकसभा के चुनाव में राजग गठबन्धन के सत्ता में आने के बाद भारतीय संघीय व्यवस्था में दिसम्बर 2017 तक भाजपा अनेक राज्यों में सरकार बना रही है। पूर्वोत्तर राज्यों म वामपंथी एवं कांग्रेसी सरकारों का पतन हुआ है। राष्ट्रीय जनतान्त्रिक गठबन्धन के मजबूत सदस्य दल तेलगूदे"ाम आन्ध्र प्रदे"ा राज्यों को वि"िाष्ट दर्जा दिये जाने के लिए केन्द्र से नाराज होकर केन्द्रीय मंत्रिमण्डल से अलग हो गया है। क्षेत्रीय दल अपने हितों के संरक्षण के बदले सौदेबाजी करते रहते हैं, जिससे संघवाद की वास्तविक भावना को आघात पहुँचता है। वर्ष 2018 में प"िचमी बंगाल की टी0एम0सी0 सरकार ने सी0बी0आई0 के अधिकारियों के साथ जो वर्ताव किया वह भारतीय संघ को कमजोर करता है।

भारत में राजनीतिक दलों की स्थिति में परिवर्तन के साथ–साथ संघवाद का स्वरूप भी बदलता रहा है। केन्द्र तथा राज्यों के बीच तनावों का कारण विभिन्न राजनीतिक दलों की विचारधाराओं में अन्तर एक महत्त्वपूर्ण कारक रहा है। भारत में संघवाद की सफलता इस बात पर निर्भर करती है कि राजनीतिक दलों में सामंजस्य एक समझौते की भावना किस सीमा तक विकसित होती है। राजनीतिक दलों की आपसी कटुता एवं टकराहट से संघ प्रणाली की दीवारें भी डगमगाने लग सकती है।

Balraj Puri- Writes :-

"The most striking feature of Indian Federalism is its evolutionary character, the process of evolution has been influenced interalia by political developments including rise of regional identities and end of one party dominant eraand judicial interpretations of the constitution,"

Indian Journal of Federal States, p. 123, 1/5.

संदर्भ ग्रन्थ :

Dynamics of Federal Bargaining, Mira Balchru, New Delhi-1988.

Economic Federalism: R.D. Panwar, Delhi-1980

Federalism and Social Change, S.P Aiyar, Bombay-1961.

Federalism in India: A Study in Union-State Relations in India, London 1965.

Government and Politics of India, Morris Jones, 1971, p. 150.

Indian Federalism: Problems and Issues, Tarun Chandra Rose, Calcutta 1987.

Indian Fedralism and Autonomy: S. Chandrasekhar, Delhi-1989.

Indian Journal of Federalism: Nice Printing Press, Delhi-1992.

Rethinking Indian Federalism: Rasheeduddin Khan, I.I.A.S., Shimla-1997.

Studies in Indian Fedralism: Pradeep Kumar, Predeep Kumar, New Delhi-1988

भारतीय संघ और राज्यों की स्वायत्तता, रहमतबेगम, लोकतंत्र समीक्षा, जनवरी–मार्च, 1977, पृष्ठ 91–93

संविधान सभा वाद–विवाद खण्ड–11, पृष्ठ 745

संविधान सभा वाद–विवाद खण्ड–11, पृष्ठ 844